मदर टेरेसा यानी सेवा का मुखौटा

सत्य अगर कड़वा भी हो तो भी वह सत्य ही कहलाता है। संत का उद्देश्य पक्षपात रहित मानवता की भलाई है।

24 मई 1931 को वे कलकत्ता आई और यही की होकर रह गई। कोलकाता आने पर धन की उगाही करने के लिए मदर टेरेसा ने अपनी मार्केटिंग आरम्भ करी। उन्होंने कोलकाता को गरीबों का शहर के रूप में चर्चित कर और खुद को उनकी सेवा करने वाली के रूप में चर्चित कर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त करी। वे कुछ ही वर्षों में "दया की मूर्ति", "मानवता की सेविका", "बेसहारा और गरीबों की मसीहा", "लार्जर दैन लाईफ़" वाली छवि से प्रसिद्ध हो गई।

क्रिस्टोफर हिचेन्स (अप्रैल 1949-दिसंबर 2011) ने टेरेसा पर एक किताब लिखी है। 'द मिशनरी पोजीशन : मदर टेरेसा इन थ्योरी एंड प्रैक्टिस'। क्रिस्टोफर हिचेन्स अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त ब्रिटिश-अमेरिकी लेखक और पत्रकार हैं. इसमें वे लिखते हैं कि मीडिया के एक विशेष वर्ग द्वारा महिमामंडित टेरेसा के 600 मिशन दुनियाभर में हैं। इनमें से कुछ ऐसे हैं जिन्हें 'मरने वालों का बसेरा' कहा जाता है। इन स्थानों पर रोगियों को रखा जाता है, जिनके बारे में चिकित्सकों ने चौंकाने वाले बयान दिए हैं। चिकित्सकों के मुताबिक, जहां रोगियों को रखा जाता है, वहां साफ-सफाई नहीं होती। रोगियों को पर्याप्त भोजन नहीं मिलने और उनके लिए दर्द निवारक दवाएं नहीं होने पर भी उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया। क्रिस्टोफर हिचेंस के अनुसार, जब इस बारे में पूछा गया तो टेरेसा का जवाब था- "गरीबों, पीड़ितों द्वारा अपने नसीब को स्वीकार करता देखने और जीसस की तरह कष्ट उठाने में एक तरह का सौंदर्य है। उन लोगों के कष्ट से दुनिया को बहुत कुछ मिलता है।"
हालांकि जब टेरेसा खुद बीमार पड़ीं तो अपने ऊपर इन सिद्धांतों को लागू नहीं किया। न ही इन अस्पतालों को अपने इलाज के लिए उपयुक्त समझा। टेरेसा ने अपना इलाज में कराया। यह बात दिसंबर 1991 की है। 'मदर टेरेसा की कमाई बंगाल के किसी भी फर्स्ट क्लास क्लीनिक को खरीद सकती थी. लेकिन क्लीनिक न चलाकर एक संस्था चलाना एक सोचा समझा फैसला था. समस्या कष्ट सहने की नहीं है, लेकिन कष्ट और मौत के नाम पर एक कल्ट चलाने की है. मदर टेरेसा खुद अपने आखिरी दिनों में अमेरिका के कैलिफोर्निया स्थित सबसे महंगे अस्पतालों में से एक स्क्रप्सि क्लीनिक एंड रिसर्च फाउंडेशन भर्ती हुईं.

क्रिस्टोफ़र हिचेन्स ने 1994 में एक डॉक्यूमेंट्री भी बनाई थी, जिसमें मदर टेरेसा के सभी क्रियाकलापों पर विस्तार से रोशनी डाली गई थी। बाद में यह फ़िल्म ब्रिटेन के चैनल-फ़ोर पर प्रदर्शित हुई और इसने

काफ़ी लोकप्रियता अर्जित की। बाद में अपने कोलकाता प्रवास के अनुभव पर उन्होंने एक किताब भी लिखी "हैल्स एन्जेल" (नर्क की परी)। इसमें उन्होंने कहा है कि "कैथोलिक समुदाय विश्व का सबसे ताकतवर समुदाय है। जिन्हें पोप नियंत्रित करते हैं, चैरिटी चलाना, मिशनरियाँ चलाना, धर्म परिवर्तन आदि इनके मुख्य काम है। जाहिर है कि मदर टेरेसा को टेम्पलटन सम्मान, नोबल सम्मान, मानद अमेरिकी नागरिकता जैसे कई सम्मान इसी कारण से मिले.

कॉलेट लिवरमोर टेरेसा के ही मिशन में काम करने वाली एक आस्ट्रेलियाई नन हैं. इन्होने अपने मोहभंग और यातनाओं पर एक किताब लिखी है- 'होप एन्ड्योर्स'। इसमें उन्होंने अपने 11 साल के अनुभव के बारे में लिखा है कि कैसे ननों को चिकित्सीय सुविधाओं, मच्छर प्रतिरोधकों और टीकाकरण से वंचित रखा गया ताकि वे 'जीसस के चमत्कार पर विश्वास करना सीखें'। कॉलेट ने पुस्तक में इस बात का भी उल्लेख किया है कि वे किस तरह एक मरणासन्न रोगी की सहायता करने के कारण संकट में पड़ गई थीं। उन्होंने लिखा है कि वहां पर तंत्र उचित या अनुचित के स्थान पर आदेश का पालन करने पर जोर देता है। जब कॉलेट को एलेक्स नामक एक बीमार बालक की सहायता करने से रोका गया तब उन्होंने टेरेसा को अलविदा कह दिया और लोगों से अपील की कि वे अपनी बुद्धि का उपयोग करें।

अरूप चटर्जी जो कोलकाता में रहते हैं अपनी पुस्तक "द फाइनल वर्डिक्ट" में लिखते हैं कि दान से मिलने वाले पैसे का प्रयोग सेवा कार्य में शायद ही होता होगा. मिशनरी में भर्ती हुए आश्रितों की हालत भी इतने धन मिलने के उपरांत भी उनकी स्थिति कोई बेहतर नहीं थी। टेरेसा दूसरो के लिए दवा से अधिक प्रार्थना में विश्वास रखती थी। जबकि खुद का इलाज कोलकाता के महंगे अस्पताल में कराती थी। मिशनरी की एम्बुलेंस मरीजों से अधिक नन आदि को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने का कार्य करती थी। यही कारण था की मदर टेरेसा की मृत्यु के समय कोलकाता निवासी उनकी शवयात्रा में न के बराबर शामिल हुए थे।"

डॉ.रॉबिन फ़ॉक्स जो "ब्रिटेन की प्रसिद्ध मेडिकल शोध पत्रिका लेंसेट (Lancet के सम्पादक थे ने 1991 में एक बार मदर के कलकत्ता स्थित चैरिटी अस्पतालों का दौरा किया था। उन्होंने पाया कि बच्चों के लिये साधारण दवाईयाँ तक वहाँ उपलब्ध नहीं थी और न ही "स्टर्लाइज्ड सिरिंज" का उपयोग हो रहा था। जब इस बारे में मदर से पूछा गया तो उन्होंने कहा कि "ये बच्चे सिर्फ़ मेरी प्रार्थना से ही ठीक हो जायेंगे"।

ईसाई मिशनरियों का पक्षपात इसी से समझ में आता है की वह केवल उन्हीं गरीबों की सेवा करना चाहती है, जो ईसाई मत को ग्रहण कर ले। भारत में कार्य करने वाली ईसाई संस्थाओं का एक चेहरा अगर सेवा है तो दूसरा असली चेहरा प्रलोभन, लोभ, लालच, भय और दबाव से धर्मान्तरण भी करना हैं। इससे तो यही प्रतीत होता है की जो भी सेवा कार्य मिशनरी द्वारा किया जा रहा है उसका मूल उद्देश्य ईसाईकरण ही है.